

॥ ओ३म ॥

# मूर्तिपूजा की हानियाँ

महर्षि दयानन्द  
सरस्वती





युगप्रवर्तक  
महर्षि दयानन्द  
सरस्वती  
'वेद' के उद्धारक,  
प्रसारक और अपूर्व  
विद्वान्



महर्षि धरती के समस्त मत वादों  
को समाप्त कर सत्य ज्ञान  
'वेद' के प्रकाश से मनुष्य  
मात्र का कल्याण करना  
चाहते थे ।

प्रकाशक

जन-ज्ञान-प्रकाशन

१५६७ हरध्यानसिंह रोड, नई दिल्ली-५

●  
महर्षि दयानन्द सरस्वती  
की अमर लेखनी से लिखित



मूल्य १३ पैसे ।

१०) सैकड़ा

मुद्रक :

जयभारती प्रेस, सदर बाजार दिल्ली-६

## मूर्तिपूजा की हानियाँ

प्रश्न—परमेश्वर निराकार है, वह ध्यान में नहीं आ सकता, इसलिए अवश्य मूर्ति होनी चाहिए। भला जो कुछ भी नहीं करे तो मूर्ति के सम्मुख जा, हाथ जोड़ परमेश्वर का स्मरण करते और नाम लेते हैं। इसमें क्या हानि है ?

उत्तर—जब परमेश्वर निराकार, सर्वव्यापक है तब उसकी मूर्ति ही नहीं बन सकती। और जो मूर्ति के दर्शन-मात्र से परमेश्वर का स्मरण होवे तो परमेश्वर के बनाए पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति अनेक पदार्थ, जिसमें ईश्वर ने अद्भुत रचना की है क्या ऐसी रचनायुक्त पृथिवी पहाड़ आदि परमेश्वर रचित महामूर्तियाँ कि जिन पहाड़ आदि से मनुष्यकृत मूर्तियाँ बनती हैं उनको देखकर परमेश्वर का स्मरण नहीं हो सकता ? जो तुम कहते हो कि मूर्ति के देखने से परमेश्वर का स्मरण होता है यह तुम्हारा कथन सर्वथा मिथ्या है। और जब वह मूर्ति सामने न होगी तो परमेश्वर के स्मरण न होने से मनुष्य एकान्त पाकर चोरी जारी आदि कुकर्म करने में प्रवृत्त भी हो सकता है। क्योंकि वह जानता है कि इस समय यहाँ मुझे कोई नहीं देखता। इसलिए वह अनर्थ करे बिना नहीं चूकता। इत्यादि अनेक दोष पाषाणादि मूर्ति-पूजा करने से सिद्ध होते हैं।

अब देखिए ! जो पाषाणादि मूर्तियों को न मानकर सर्वदा सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी परमात्मा को सर्वत्र जाता और मानता है वह पुरुष सर्वत्र, सर्वदा परमेश्वर को सबके बुरे-भले कर्मों का द्रष्टा जानकर एक क्षणमात्र भी परमात्मा से अपने को पृथक् न जान के, कुकर्म करना तो कहाँ रहा किन्तु मन में कुचेष्टा भी नहीं कर सकता। क्योंकि वह जानता है, जो मैं मन, वचन और कर्म से भी कुछ बुरा काम करूँगा तो इस अन्तर्यामी के न्याय से बिना दण्ड पाए कदापि न



बचूंगा, और नाम स्मरणमात्र से कुछ भी फल नहीं होता। जैसा कि मिश्री-मिश्री कहने से मुंह मीठा और नीम-नीम कहने से कड़वा नहीं होता किन्तु जीभ से चाखने ही से मीठा वा कड़वापन जाना जाता है।

**प्रश्न—**क्या नाम लेना सवथा मिथ्या है। जो सर्वत्र पुराणों में नामस्मरण का बड़ा महात्म्य लिखा है ?

**उत्तर—**नाम लेने की तुम्हारी रीति उत्तम नहीं। जिस प्रकार तुम नाम स्मरण करते हो वह रीति झूठी है।

**प्रश्न—**हमारी कसी रीति है ?

**उत्तर—**वेदविरुद्ध।

**प्रश्न—**भला अब आप हमको वेदोक्त नामस्मरण की रीति बतलाइए।

**उत्तर—**नाम स्मरण इस प्रकार करना चाहिए। जैसे 'न्याय कारी' ईश्वर का एक नाम है। इस नाम से जो इसका अर्थ है कि जैसे पक्षपात रहित होकर परमात्मा सबका यथावत् न्याय करता है वैसे उसको ग्रहण कर न्याययुक्त व्यवहार सर्वदा करना, अन्याय कभी न करना। इस प्रकार एक नाम से भी मनुष्य का कल्याण हो सकता है।

**प्रश्न—**हम भी जानते हैं कि परमेश्वर निराकार है परन्तु उसने शिव, विष्णु, गणेश, सूर्य और देवी आदि के शरीर धारण करके राम, कृष्णादि अवतार लिए, इससे उसकी मूर्ति बनती है क्या यह भी बात झूठी है ?

**उत्तर—**हाँ-हाँ झूठी। क्योंकि "आज एकपात" "अकायम्" इत्यादि विशेषज्ञों से परमेश्वर को जन्म मरण और शरीरधारण-रहित वेदों में कहा है। तथा युक्ति से भी परमेश्वर का अवतार कभी नहीं हो सकता क्योंकि जो आकाशवत् सर्वत्र व्यापक अनन्त और सुख-दुःख

दृश्यादि गुण रहित है। वह एक छोटे से वीर्य, गर्भाशय और शरीर में क्यों कर आ सकता है ? आता जाता वह है कि जो एकदेशीय हो ! और जो अचल, अदृश्य, जिसके बिना एक परमाणु भी खाली नहीं है, उसका अवतार कहना जानो बन्ध्या के पुत्र का विवाह कर उसके पौत्र के दर्शन करने की बात कहना है।

प्रश्न—जब परमेश्वर व्यापक है तो मूर्ति में भी है। पुनः चाहे किसी पदार्थ में भावना करके पूजा करना अच्छा क्यों नहीं ? देखो—

न काष्ठे विद्यते देवो न पाषाणे न मृण्मये ।

भावे हि विद्यते देवस्तस्माद्भावो हि कारणम् ॥<sup>१</sup>

परमेश्वर देव न काष्ठ, न पाषाण, न मृत्तिका से बनाये पदार्थों में हैं, किन्तु परमेश्वर तो भाव में विद्यमान है। जहाँ भाव करें वहाँ ही परमेश्वर सिद्ध होता है।

उत्तर—जब परमेश्वर सर्वत्र व्यापक है तो किसी एक वस्तु में परमेश्वर की भावना करना अन्यत्र न करना, यह ऐसी बात है कि जैसी चक्रवर्ती राजा को सब राज्य की सत्ता से छुड़ा के एक छोटी-सी भोंपड़ी का स्वामी मानना, [देखो ! यह]<sup>२</sup> कितना बड़ा अपमान है ! वैसा तुम परमेश्वर का भी अपमान करते हो। जब व्यापक मानते हो, तो वाटिका में से पुष्प पत्र तोड़ के क्यों चढ़ाते ? चन्दन घिस के क्यों लगाते ? धूप को जला के क्यों देते ? घण्टा, घड़ियाल, भांज, पखावजों को लकड़ी से कूटना, पीटना क्यों करते हो ? तुम्हारे हाथों में है, क्यों जोड़ते ? शिर में है, क्यों शिर नमाते ? अन्न, जलादि में है, क्यों नैवेद्य भरते ? जल में है, स्नान क्यों कराते ? क्योंकि उन सब पदार्थों में परमात्मा व्यापक है। और तुम व्यापक की पूजा करते हो वा व्याप्य की ? जो व्यापक की करते हो तो पाषाण लकड़ी आदि पर चन्दन पुष्पादि क्यों चढ़ाते हो ? और जो व्याप्य की करते हो तो हम पर-

१. चाणक्य ८ । ११ ।

२. समर्थदान ने जोड़ा।



मेश्वर की पूजा करते हैं, ऐसा झूठ क्यों बोलते हो ? हम पाषाणादि के पुजारी हैं, ऐसा सत्य क्यों नहीं बोलते ?

अब कहिए “भाव” सच्चा है वा झूठा ? जो कहो सच्चा है तो तुम्हारे भाव के आधीन होकर परमेश्वर बद्ध हो जायगा और तुम मृत्तिका में सुवर्ण रजतादि, पाषाण में हीरा पन्ना आदि, समुद्र-फेन में मोती, जल में घृत, दुग्ध में दधि आदि, और धूलि में मैदा शक्कर आदि की भावना करके उनको वैसे क्यों नहीं बनाते हो ? तुम लोग दुःख की भावना कभी-भी नहीं करते, वह क्यों होता ? और सुख की भावना सदैव करते हो, वह क्यों नहीं प्राप्त होता ? अँधा पुरुष नेत्र की भावना करके क्यों नहीं देखता ? मरने की भावना नहीं करते, क्यों मर जाते हो ? इसलिए तुम्हारी भावना सच्ची नहीं । क्योंकि जैसे में वैसी करने का नाम भावना कहते हैं । जैसे अग्नि में अग्नि, जल में जल जानना और जल में अग्नि, अग्नि में जल समझना अभावना है । क्योंकि जैसे को वैसा जानना ज्ञान और अन्यथा जानना अज्ञान है । इसलिए तुम अभावना को भावना और भावना को अभावना कहते हो ।

**प्रश्न**—अजी, जब तक वेदमन्त्रों से आवाहन नहीं करते तब तक देवता नहीं आता और आवाहन करने से भट आता और विसर्जन करने से चला जाता ।

**उत्तर**—जो मन्त्र को पढ़कर आवाहन करने से देवता आ जाता है तो मूर्ति चेतन क्यों नहीं हो जाती ? और विसर्जन करने से चला क्यों नहीं जाता ? और वह कहाँ से आता और कहाँ जाता है ? सुनो अन्धो ! पूर्ण परमात्मा न आता है न जाता है । जो तुम मन्त्र बल से परमेश्वर को बुला लेते हो तो उन्हीं मन्त्रों से अपने मरे हुए पुत्र के शरीर में जीव को क्यों नहीं बुला लेते ? और शत्रु के शरीर में जीवात्मा का विसर्जन करके क्यों नहीं नहीं मार सकते ? सुनो भाई भोले-भाले लोगो ! ये पोपजी तुमको ठग कर अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं । वेदों में पाषाणादि मूर्ति-पूजा और परमेश्वर के आवाहन विसर्जन करने का एक अक्षर भी नहीं है ।

**प्रश्न**—जो वेदों में विधि नहीं तो खण्डन भी नहीं है । और जो खण्डन हैं तो “प्राप्तौ सत्यां निषेध” मूर्ति के होने ही से खण्डन हो सकता है ।

**उत्तर**—विधि तो नहीं परन्तु परमेश्वर के स्थान में किसी अन्य पदार्थ को पूजनीय न मानना और सर्वथा निषेध किया । क्या अपूर्वविधि नहीं होता ! सुनो यह है—

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।

ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याऽऽरताः ॥१॥

यजु०, अ० ४० । मं० ६ ॥

न तस्य प्रतिमा अस्ति ॥२॥ यजु० अ० ३२ । मं० ३ ॥

जो असम्भूति अर्थात् अनुत्पन्न अनादि प्रकृति कारण की ब्रह्म के स्थान में उपासना करते हैं वे अन्धकार अर्थात् अज्ञान और दुःख-सागर में डूबते हैं और सम्भूति जो कारण से उत्पन्न हुए कार्य रूप पृथिवी आदि भूत पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादि के शरीर की उपासना ब्रह्म के स्थान में करते हैं, वे उस अन्धकार से भा अधिक अन्धकार अर्थात् महामूर्ख चिरकाल घोर दुःख रूप नरक में गिर के महाक्लेश भोगते हैं ॥१॥ जो सब जगत् में व्यापक है उस निराकार परमात्मा की प्रतिमा, परिमाण, सादृश्य, वा मूर्ति नहीं है ॥२॥

**प्रश्न**—मूर्तिपूजा में पुण्य नहीं तो पाप नहीं है ?

**उत्तर**—कर्म दो ही प्रकार के होते हैं—विहित—जो कर्त्तव्यता से वेद में सत्यभाषणादि प्रतिपादित हैं । दूसरे निषिद्ध—जो अकर्त्तव्यता से मिथ्याभाषणादि वेद में निषिद्ध हैं । जैसे विहित का अनुष्ठान करना वह धर्म, उसका न करना अधर्म है वैसे ही निषिद्ध कर्म का करना अधर्म और न करना धर्म है । जब वेदों से निषिद्ध मूर्तिपूजादि कर्मों को तुम करते हो तो पापी क्यों नहीं ?

**प्रश्न**—देखो वेद अनादि हैं । उस समय मूर्ति का क्या काम था ? क्योंकि पहले तो देवता प्रत्यक्ष थे । यह रीति तो पीछे से



तन्त्र और पुराणों से चली है। जब मनुष्यों का ज्ञान और सामर्थ्य न्यून हो गया तो परमेश्वर को ध्यान में नहीं ला सके। और मूर्ति का ध्यान तो कर सकते हैं। इस कारण अज्ञानियों के लिए मूर्तिपूजा है। क्योंकि सीढ़ी-सीढ़ी से चढ़े तो भवन पर पहुँच जाय। पहिली सीढ़ी छोड़कर ऊपर जाना चाहे तो नहीं जा सकता। इसलिए मूर्ति प्रथम सीढ़ी है। इसको पूजत-पूजते जब ज्ञान होगा और अन्तःकरण पवित्र होगा तब परमात्मा का ध्यान कर सकेगा। जैसे लक्ष्य के मारने वाले प्रथम स्थूल-लक्ष्य में तीर, गोली, व गोला आदि मारता-मारता पश्चात् सूक्ष्म में भी निशाना मार सकता है, वैसे स्थूल मूर्ति की पूजा करता-करता पुनः सूक्ष्म ब्रह्म को भी प्राप्त होता है। जैसे लड़कियाँ गुड़ियों का खेल तब तक करती हैं कि जब तक सच्चे पति को प्राप्त नहीं होतीं, इत्यादि प्रकार से मूर्ति पूजा करना दुष्ट काम नहीं।

उत्तर—जब वेदविहित धर्म और वेदविरुद्धाचरण में अधर्म है तो पुनः तुम्हारे कहने से भी मूर्तिपूजा करना अधर्म ठहरा। जो-जो ग्रन्थ वेद से विरुद्ध हैं उन-उनका प्रमाण करना जानो नास्तिक होना है। सुनो—

नास्तिको वेदनिन्दकः ॥१॥ [मनु० २ ॥११॥]

या वेदबाह्या स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः ।

सर्वास्ता निष्फलाः प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ताः स्मृताः ॥२॥

उत्पद्यन्ते च्यवन्ते च यान्यतोऽन्यानि कानिचित् ।

तान्यर्वाकालिकतया निष्फलान्यनृतानि च ॥३॥

मनु० अ० १२ । [६५, ६६॥]



मनुजी कहते हैं कि जो वेदों की निन्दा अर्थात् अपमान, त्याग, विरुद्धाचरण करता है वह नास्तिक कहाता है ॥१॥ जो ग्रन्थ वेद-बाह्य कुत्सित पुरुषों के बनाए संसार को दुःखसागर में डुबाने वाले हैं वे सब निष्फल, असत्य, अन्धकाररूप, इस लोक और परलोक में दुःख-दायक हैं ॥२॥ जो इन वेदों से विरुद्ध ग्रंथ उत्पन्न होते हैं वे आधुनिक होने से शीघ्र नष्ट हो जाते हैं । उनका मानना निष्फल और भूठा है ॥३॥ इसी प्रकार ब्रह्मा से लेकर जैमिनि महर्षि पर्यन्त का मत है कि वेदविरुद्ध को न मानना किन्तु वेदानुकूल ही का आचारण करना धर्म है । क्यों ? वेद सत्य अर्थ का प्रतिपादक है । इसके विरुद्ध जितने तन्त्र और पुराण हैं वेदविरुद्ध होने से झूठे हैं । कि जो वेद से विरुद्ध चलते हैं उनमें कही हुई मूर्त्तिपूजा भी अधर्मरूप है । मनुष्यों का ज्ञान जड़ की पूजा से नहीं बढ़ सकता किन्तु जो कुछ ज्ञान है वह भी नष्ट हो जाता है । इसलिए ज्ञानियों की सेवा संग से ज्ञान बढ़ता है, पाषाणादि से नहीं । क्या पाषाणादि मूर्त्तिपूजा से परमेश्वर को ध्यान में कभी ला सकता है ? नहीं नहीं, मूर्त्तिपूजा सीढ़ी नहीं, किन्तु एक बड़ी खाई है जिससे गिरकर चकनाचूर हो जाता है । पुनः उस खाई से निकल नहीं सकता, किन्तु उसी में मर जाता है । हां, छोटे धार्मिक विद्वानों से लेकर परम विद्वान् योगियों के संग से सद्विद्या और सत्यभाषणादि परमेश्वर की प्राप्ति की सीढ़ियां हैं, जैसे ऊपर घर में जाने की निधली श्रेणी होती है । किन्तु मूर्त्तिपूजा करते-करते ज्ञानी तो कोई न हुआ प्रत्युत सब मूर्त्तिपूजक अज्ञानी रहकर मनुष्य जन्म व्यर्थ खोके ब्रह्म से मर गए और जो अब हैं वा होंगे, वे भी मनुष्य जन्म के धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्तिरूप फलों से विमुख होकर निरर्थ नष्ट हो जायेंगे । मूर्त्तिपूजा ब्रह्म की प्राप्ति में स्थूल लक्ष्यवत् नहीं किन्तु धार्मिक विद्वान् और सृष्टि विद्या है । इसको बढ़ाता-बढ़ाता ब्रह्म को भी पाता है । और मूर्त्ति गुड़ियों के खेलवत् नहीं किन्तु प्रथम अक्षराभ्यास सुशिक्षा का होना गुड़ियों के खेलवत् ब्रह्म की प्राप्ति का साधन है । सुनिए ! जब अच्छी शिक्षा और विद्या को प्राप्त होगा तब सच्चे स्वामी परमात्मा को भी प्राप्त हो जाएगा ।

प्रश्न—साकार में मन स्थिर होता और निराकार में स्थिर होना कठिन है। इसलिए मूर्तिपूजा रहनी चाहिए।

उत्तर—साकार में मन स्थिर कभी नहीं हो सकता। क्योंकि उसको मन भट ग्रहण करके उसी के एक-एक अवयव में धूमता और दूसरे में दौड़ जाता है। और निराकार परमात्मा के ग्रहण में यावत्सामर्थ्य मन अत्यन्त दौड़ता है तो भी अन्त नहीं हो पाता। निरवयव होने से चंचल भी नहीं रहता किन्तु उसी के गुण कर्म स्वभाव का विचार करता-करता आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है। और जो साकार में स्थिर होता तो सब जगत् का मन स्थिर हो जाता, क्योंकि जगत् में मनुष्य, स्त्री, पुत्र, धन, मित्र आदि साकार में फंसा रहता है। परन्तु किसी का मन स्थिर नहीं होता जब तक निराकार में न लगावें। क्योंकि निरवयव होने से उसमें मन स्थिर हो जाता है। इसलिए मूर्तिपूजन करना अधर्म है।

२—उसमें करोड़ों रुपये मन्दिरों में व्यय करके दरिद्र होते हैं और उसमें प्रमाद होता है।

३—स्त्री पुरुषों का मन्दिरों में मेला होने से व्यभिचार, लड़ाई, बखेड़ा और रोगादि उत्पन्न होते हैं।

४—उसी को धर्म, अर्थ काम और मुक्ति का साधन मान के पुरुषार्थरहित होकर मनुष्य जन्म व्यर्थ गंवाता है।

५—नाना प्रकार की विरुद्ध स्वरूप नाम चरित्रयुक्त मूर्तियों के पुजारियों का ऐक्यमत नष्ट होके विरुद्धमत में चलकर आपस में फूट बड़ा के देश का नाश करते हैं।

६—उसी के भरोसे से शत्रु का पराजय और अपना विजय मान बैठे रहते हैं। उनका पराजय होकर राज्य, स्वातन्त्र्य और धन का सुख उनके शत्रुओं के स्वाधीन होता है और आप पराधीन भटियारे के टट्टू और कुम्हार के गदहे के समान शत्रुओं के वश में होकर अनेक विधि दुःख पाते हैं।



७—जब कोई किसी को कहे कि हम तेरे बैठने के आसन वा नाम पर पत्थर धरें तो जैसे वह उस पर क्रोधित होकर मारना वा गाली प्रदान करता है वैसे ही जो परमेश्वर के उपासना के स्थान हृदय और नाम पर पाषाणादि मूर्तियां धरते हैं, उन दुष्ट बुद्धि वालों का सत्यानाश परमेश्वर क्यों न करे ?

८—भ्रान्त होकर मन्दिर-मन्दिर देश देशान्तर में घूमते-घूमते दुःख पाते, धर्म, संसार और परमार्थ का काम नष्ट करते, चोर आदि से पीड़ित होते, ठगों से ठगते रहते हैं ।

९—दुष्ट पुजारियों को धन देते हैं । वे उस धन को वेश्या, परस्त्री-गमन, मद्य, मांसासार, लड़ाई बखेड़ों में व्यय करते हैं जिससे दाता का सुख का मूल नष्ट होकर दुःख होता है ।

१०—माता, पिता आदि माननीयों का अपमान कर पाषाणादि मूर्तियों का मान करके कृतघ्न हो जाते हैं ।

११—उन मूर्तियों को कोई तोड़ डालता वा चोर ले जाता है, तब हा-हा करके रोते रहते हैं ।

१२—पुजारी परस्त्रियों के अंग और पुजारिन परपुरुषों के संग से प्रायः दूषित होकर स्त्री पुरुष के प्रेम के आनन्द को हाथ से खो बैठते हैं ।

१३—स्वामी सेवक की आज्ञा का पालन यथावत् न होने से परस्पर विरुद्धभाव होकर नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं ।

१४—जड़ का ध्यान करने वाले का आत्मा भी जड़बुद्धि हो जाता है क्योंकि ध्येय का जड़त्व धर्म अन्तःकरण द्वारा आत्मा में अवश्य आता है ।

१५—परमेश्वर ने सुगन्धियुक्त पुष्पादि पदार्थ वायु जल के दुर्गन्ध निवारण और आरोग्यता के लिए बनाए हैं । उनको पुजारी जी तोड़ताड़ कर, न जाने उन पुष्पों की कितने दिन तक सुगन्धि आकाश में चढ़कर वायु जल की शुद्धि करती [और] पूर्ण सुगंधि के समय तक

उसका सुगन्ध होता, उसका नाश मध्य में ही कर देते हैं। पुष्पादि कीच के साथ मिल सड़कर उल्टा दुर्गन्ध उत्पन्न करते हैं। क्या परमात्मा ने पत्थर पर चढ़ाने के लिए पुष्पादि सुगन्धयुक्त पदार्थ रचे हैं ?

१६—पत्थर पर चढ़े हुए पुष्प चन्दन और अक्षत आदि सबका जल और मृत्तिका के संयोग होने से मोरी वा जितना कुण्ड में आकर सड़ के इतना उससे दुर्गन्ध आकाश में चढ़ता है कि मनुष्य के मल का, और सहस्रों जीव उसमें पड़ते, उसी में मरते और सड़ते हैं।

ऐसे-ऐसे अनेक मूर्तिपूजा के करने में दोष आते हैं। इसलिए पाषाणादि मूर्तिपूजा सज्जन लोगों को सर्वथा त्यक्तव्य है। और जिन्होंने पाषाणमय मूर्ति की पूजा की है, करते हैं और करेंगे, वे पूर्वोक्त दोषों से न बचे, न बचते हैं, और न बचेंगे।

प्रश्न—जैसे स्त्री आदि की पाषाणादि मूर्ति देखने से कामोत्पत्ति होती है वैसे वीतराग शान्त की मूर्ति देखने से वैराग्य और शान्ति की प्राप्ति क्यों न होगी ?

उत्तर—नहीं हो सकती, क्योंकि वह मूर्ति के जड़त्व धर्म आत्मा में आने से विचार शक्ति घट जाती है। विवेक के बिना न वैराग्य और वैराग्य के बिना विज्ञान, विज्ञान के बिना शान्ति नहीं होती। और कुछ होता है सो उनके संग, उपदेश और उनके इतिहासादि के देखने से होता है, क्योंकि जिसका गुण वा दोष न जान के उसकी मूर्तिमात्र देखने से प्रीति नहीं होती। प्रीति होने का कारण गुणज्ञान है। ऐसे मूर्तिपूजा आदि बुरे कारणों ही से आर्यावर्त्त में निकम्मे पुजारी, भिक्षुक, आलसी, पुरुषार्थ रहित करोड़ों मनुष्य हुए हैं। वे मूढ़ होने से सब संसार में मूढ़ता उन्हीं ने फैलाई है। झूठ छल भी बहुत-सा फैला है।

देखो ! मूर्तिपूजा से श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण, नारायण और शिवादि की बड़ी निन्दा और उपहास होता है। सब कोई जानते

१. यहाँ ऐतिहासिक नारायण और शिव का कथन है।



लक्ष्मी और पार्वती आदि महाराणियाँ थीं। परन्तु जब उनकी मूर्तियाँ मन्दिर आदि में रख के पुजारी लोग उनके नाम से भीख मांगते हैं अर्थात् उनको भिखारी बनाते हैं कि आओ महाराज ! महाराजाजी ! सेठ साहूकारो ! दर्शन कीजिए, बैठिए, चरणामृत लीजिए, कुछ भेंट चढ़ाइये, महाराज ! सीताराम, कृष्ण, रुक्मिणी वा राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण और महादेव पार्वती जी को तीन दिन से बालभोग वा राजभोग अर्थात् जलपान वा खानपान भी नहीं मिला है। आज इनके पास कुछ भी नहीं है। सीता आदि को नथुनी आदि राणीजी वा सेठानीजी बनवा दीजिये। अन्न आदि भेजो तो रामकृष्णादि का भोग लगावें। वस्त्र सब फट गये हैं। मन्दिर के कोने सब गिर पड़े हैं। ऊपर से चूता है। और दुष्ट चोर जो कुछ था उसे उठा ले गये। कुछ ऊंदरों (चूहों) ने काट कूट डाले। देखिए ! एक दिन ऊंदरों ने ऐसा अनर्थ किया कि इनकी आँख भी निकाल के भाग गए। अब हम चाँदी की आँख न बना सके। इसलिए कौड़ी की लगा दी है। रामलीला और रासमण्डल भी करवाते हैं। सीताराम) राधाकृष्ण नाच रहे हैं। राजा और महन्त आदि उनके सेवक आनन्द में बैठे हैं ! मन्दिर में सीतारामादि खड़े और पुजारी वा महन्तजी आसन अथवा गद्दी पर तकिया लगाए बैठते हैं। महागरमी<sup>१</sup> में भी ताला लगा भीतर बन्द कर देते हैं और आप सुन्दर हवा में पलंग बिछाकर सोते हैं। बहुत से पुजारी अपने नारायण को डब्बी में बन्द कर ऊपर से कपड़े आदि बाँध गले में लटका लेते हैं जैसे कि बानरी अपने बच्चे को गले में लटका लेती है वैसे पुजारियों के गले में भी लटकते हैं। जब कोई मूर्ति को तोड़ता है तब हाय-हाय कर छाती पीट बकते हैं कि सीतारामजी, राधाकृष्णजी, और शिवपार्वती को दुष्टों ने तोड़ डाला ! अब दूसरी मूर्ति मंगवा कर जो कि अच्छे शिल्पी ने सज्जमरमर की बनाई हो स्थापन कर पूजनी चाहिए। नारायण को घी बिना भोग नहीं लगता। बहुत नहीं तो थोड़ा सा अवश्य है कि वे बड़े महाराजधिराज और उनकी स्त्री सीता तथा रुक्मिणी भेज देना। इत्यादि बातें इन पर ठहराते हैं और रासमण्डल वा रामलीला के अन्त में सीताराम वा

राधाकृष्ण से भीख मंगवाते हैं। जहां मेला ठेला होता है वहाँ छोकरे पर मुकुट धर कन्हैया बना मार्ग में बैठाकर भीख मंगवाते हैं। इत्यादि बातों को आप लोग विचार लीजिए कि कितने बड़े शोक की बात है।

भला कहो तो सीतारामादि ऐसे दरिद्र और भिक्षुक थे ? यह उनका उपहास और निन्दा नहीं तो क्या है ? इससे बड़ी अपने माननीय पुरुषों की निन्दा होती है। भला जिस समय ये विद्यमान थे उस समय सीता रुक्मिणी, लक्ष्मी और पार्वती को सड़क पर वा किसी मकान में खड़ी कर पुजारी कहते कि आओ इनका दर्शन करो और कुछ भेंट पूजा धरो तो सीतारामादि इन मूर्खों के कहने से ऐसा काम कभी न करते और न करने देते। जो कोई ऐसा उपहास उनका करता है उसको बिना दण्ड दिये कभी छोड़ते ? हां, जब उन्होंने दण्ड न पाया तो इनके कर्मों ने पुजारियों को बहुत सी मूर्तिविरोधियों से प्रसादी दिलादी और अब भी मिलती है और जब तक इस कुकर्म को न छोड़ेंगे तब तक मिलेगी। इसमें क्या सन्देह है कि जो आर्यावर्त्त की प्रतिदिन महाहानि, पाषाणादि मूर्तिपूजकों का पराजय इन्हीं कर्मों से होता है, क्योंकि पाप का फल दुःख है। इन्हीं पाषाणादि मूर्तियों के विश्वास से बहुत-सी हानि हो गई। जो न छोड़ेंगे तो प्रतिदिन अधिक-अधिक होती जायगी।

### ईश्वर कैसा है ?

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

(—आर्यसमाज का द्वितीय नियम)



# वैदिक धर्म प्रचारार्थ : साहित्य

१. वैदिक सत्संग पद्धति—(Vedic Prayer) हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में । मूल्य २) । १००) सैकड़ा
  २. मृत्यु का सौन्दर्य—मूल्य १५ पैसे । १०) सैकड़ा
  ३. मूर्तिपूजा की हानियाँ—महर्षि दयानन्द की लेखनी से । १०) सैकड़ा ।
  ४. मैं कौन हूँ ?—मनुष्य शरीर का आध्यात्मिक और वैज्ञानिक विवेचन । प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० सन्तराम M. Sc. लिखित । मूल्य २) । १०) सैकड़ा ।
  ५. विजय का स्रोत—वेदमन्त्र की अद्वितीय व्याख्या । १५ पैसे ।
  ६. नवयुग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द—२० चित्रों सहित अनुपम जीवन गाथा । आवरण पर ऋषि का तिरंगा चित्र, बढ़िया आफसेट पेपर । मूल्य १) । ६०) सैकड़ा । १८) के २५ । ८) के १० ।
  ७. The Vedic Way of Life—By Dewan Chand. मूल्य १) ।
  ८. A Challenge to Christian Faith—(Swami Shradhananda). ३) सैकड़ा ।
  ९. पोपकी सेना का भारत पर हमला—मूल्य १३ पैसे । १०) सैकड़ा ।
  १०. ईसाई पादरी उत्तर दें ! अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द के ३६ प्रश्न । ३) सैकड़ा ।
  ११. ज्ञान-विज्ञान का शत्रु-ईसाईमत—श्री ओम्प्रकाश त्यागी M.P. १०) सैकड़ा
  १२. यज्ञ-प्रसाद—महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती लिखित । मूल्य ५० पैसे । २५) सैकड़ा ।
  १३. आर्यसमाज की मान्यताएँ—शास्त्रार्थ महारथी पं० रामचन्द्र देहलवी जी लिखित । मूल्य १३ पैसे । १०) सैकड़ा ।
  १४. विश्व को वेद का सन्देश—मूल्य १३ पैसे । १०) सैकड़ा ।
  १५. सत्संग-पद्धति —(केवल हिन्दी में) बढ़िया कागज पर । मूल्य ५० पैसे । २५) सैकड़ा (तिरंगा आवरण)
  १६. आर्य समाज क्या मानता है —पं० मदनमोहनविद्यासागर १०) सैकड़ा
  १७. प्रार्थना मंत्र व्याख्या—हरि शरण सिद्धांतालंकार ३०) सैकड़ा ।
- आदेश के साथ चौथाई धन भेजें । रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें ।

व्यवस्थापक—जन-ज्ञान-प्रकाशन

१५६७ हरध्यानसिंह रोड, करौलबाग, नई दिल्ली-५